शोध-सारांशिका

'अनासक्ति दर्शन एवं विनोबा का जीवन' शीर्षक यह शोध कार्य आचार्य विनोबा भावे और अनासक्ति योग का एक संक्षिप्त अध्ययन है। इस अध्ययन को चार अध्यायों में उपस्थापित किया गया है।

प्रथम अध्याय में यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि अनासक्ति का अर्थ पारम्परिक शास्त्रों में क्या बताया गया है। इसके अर्थ के स्पष्टीकरण में भगवत्-गीता के श्लोकों और गांधी जी के वचनों को मुख्य रूप से आधार बनाया गया है। इसी क्रम में, आसक्ति के स्वरूप की भी चर्चा आयी है और उसके निषेधरूप से भी आसक्ति को समझाया गया है। लोक में इसका किस तरह का अनुपयुक्त अर्थ प्रचलित है इसको भी बताया गया है। आगे, इस अध्याय में यह बताया गया है कि अनासक्ति ज्ञान, कर्म और भक्ति तीनों से आधारभूत रूप से जुड़ा है। साथ ही, अनासक्ति योग के अनुसरण की महत्ता भी बतायी गयी है। सुकरात व अरस्तु सरीखे कुछ पाश्चात्य विद्वानों के विचारों को रखते हुए अनासक्त निष्काम कर्म को नैतिकता के सिद्धान्त के रूप में स्थान दिया गया है।

द्वितीय अध्याय आचार्य विनोबा भावे के जीवन पर केन्द्रित है। इसमें उनके बचपन, विद्यार्थी जीवन से लेकर गृह-त्याग, संत जीवन, महात्मा गांधी से मुलाकात, और तदोपरान्त विविध आश्रमों में उनके जीवन का एक संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है। विनोबा जी के समाज सुधार के प्रयासों और कई एक आन्दोलनों के सफल संचालन का भी एक बेहद संक्षिप्त ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है।

तृतीय अध्याय में विनोबा जी के जीवन दर्शन को सामने रखने का प्रयास किया गया है। उनके जीवन दर्शन को जानने का मुख्य स्रोत उनका जीवन वृत्तान्त ही है। इस अध्याय में उनके जीवन वृत्तान्त के दार्शनिक पहलुओं को उजागर किया गया है। यहाँ यह बताया गया है कि किस तरह विनोबा अपने व्याहारिक जीवन में दार्शनिक सिद्धान्तों को उतारते थे। उनका जीवन-व्यवहार ही अपने आप में जीवन-दर्शन था। सिद्धान्त और व्यवहार का अंतर विनोबा ने अपने जीवन में लगभग पाट दिया था। यह उन्होंने

अपने बाल्य-काल से लेकर जीवन-पर्यन्त के सतत् प्रयासों से संभव किया। हृदय की पवित्रता, समर्पण और सत्य के वरण से जीवन में अडिग रहते हुए उन्होंने जो योग किया वह अनासक्तयोग का एक अप्रतिम उदाहरण बना।

चतुर्थ अध्याय का शीर्षक है— आचार्य विनोबा भावे का अनासक्ति भाष्य। इस शीर्षक के अन्तर्गत विनोबा जी ने अनासक्ति योग को किस प्रकार से उपदिष्ट किया है इस पर प्रकाश डाला गया है। इसके लिए उनके प्रवचनों को आधार बनाया गया है। साथ ही, चूँकि उनके प्रवचन शून्य से नहीं उपजे थे इसलिए इस सन्दर्भ में पूर्व के अन्य विचारों को भी जोड़कर देखा गया है। इसी क्रम में, अन्य परम्परा में भी अनासक्ति को कैसे समझा जाता है इसका भी उल्लेख हुआ है।

इस तरह मेरे शोध का मूल भावार्थ अनासक्ति पर केन्द्रित होकर समाज की सामाजिकी के लिए एक जीवन व्यावहारिक संदेश देता है जो निरंतर जीवन-प्रवाह के लिए स्तुत्य है।

***